ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(7): 24-25
www.allresearchjournal.com
Received: 08-04-2015
Accepted: 09-05-2015

डॉ. टेकचन्द मीणा
सहायक आचार्य संस्कृतविभाग,
दिल्लीविश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

Correspondence:
डॉ. टेकचन्द मीणा
सहायक आचार्य संस्कृतविभाग,
दिल्लीविश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

मधुसूदन सरस्वती की दृष्टि में चित्तद्रुति के कारण

डॉ. टेकचन्द मीणा

मधुसूदन सरस्वती ने प्रथम उल्लास में स्थायिभाव के प्रसर्घे में चित्तद्रुति के कारण ही कोई भी भाव स्थायी अवस्था को प्राप्त करता है कि विवेचना की थी। द्वितीय उल्लास में चित्तद्रुति के कारण कामक्रोधदि तापक हैं किस तापक से कौन सा भाव स्थायी जनता है तथा वह स्थायिभाव किस रस में परिणत होता है इसकी विवेचना की जा रही है–

1. काम– शरीर सम्बन्ध विशेष की प्रबल स्पृहा काम है। उस काम के सात्मक ;चेतनद्ध शरीर के समीप और दूर होने से दो भेद होते हैं– सन्निधनजन्य काम और असन्निधनजन्य काम।[1] इन दोनों काम से द्रवितचित्त में श्रीकृष्णविषयक निष्ठारूप रति उत्पन्न होती है वह क्रमशः सम्भोग और विप्रयोग रति कहलाती है।[2] ये दोनों रतियाँ आचार्य के अनुसार स्थायिभाव होती है और इन दोनों रतियों से संयोग और वियोग शृंगार रस की अनुभूति होती है।

2. क्रोध– ईर्ष्या के कारण चित्त का दाह क्रोध है। इस क्रोध से द्रवित चित्त में वह द्वेष शब्द से जाना जाता है।[3] द्वेष के चलते चित्त में जो व्याकुलता होती है वह दो प्रकार की होती है–(1) उपद्रावक नाश विषयिणी (2) उपद्रावक प्रीति विषयिणी।[4] श्रीकृष्ण के अभ्युदय आदि को न सह सकना ईर्ष्या है उस ईर्ष्या से चित् में क्रोध होगा और पश्चात् द्वेष हो जायेगा। शिशुपालादि के चित्त में श्रीकृष्ण के उत्कर्ष से ईर्ष्याजन्य द्वेष होता है और उसके नाशविषयक द्वेष को उपद्रावक नाश विषयिणी द्वेष कहा जाता है। ईर्ष्याजन्य भगवदाकारता सुख रूप में प्रविष्ट नहीं होती है क्योंकि इसमें भगवान् से ईर्ष्या होती है। अतः भगवद्विषयक होने पर भी पूर्ण चित्तद्रुति नहीं होती और इससे अभिव्यक्त होने वाला रौद्ररस भक्तिरस नहीं बनता है। हालांकि यहाँ पर श्रीकृष्ण आलम्बन है परन्तु भक्तों को शिशुपालादि के द्वारा भगवान् श्रीकृष्ण की निन्दा अग्राह्य होने से चित्तद्रुति नहीं होगी और चित्तद्रुति के अभाव में स्थायिभाव की स्थिति भी नहीं होगी। उपद्रावक प्रीति विषयिणी द्वेष में उपद्रावक के नाश की इच्छा से नहीं बल्कि अतिशय प्रीति के कारण द्वेष होता है। श्रीकृष्ण की सपत्नीगमनादि से गोपिकाओं की चित्त व्याकुलता से उक्त द्वेष उत्पन्न होता है यह द्वेष कामजन्य होने से इसका अन्तर्भाव रति में हो जाता है।

3. भय– द्वेष कारण के बिना निजापराध निमित्त से चित्त की जो विकलता है उससे द्रवित चित्त की जो विकलता है उससे द्रवित चित्त में श्रीकृष्णविषयक रति को भय कहते हैं। तात्पर्य यह है कि अपने इष्ट के प्रति स्वयं द्वारा किये गये अपराध के स्मरण, मनन एवं चिन्तन से चित्त व्याकुल हो जाता है और व्याकुलता के चलते चित्त के द्रवीभूत होने पर चित्त में जो रति होती है, वह भय है।[5] इस कृष्णविषयिणी भय रति स्थायिभाव से प्रीतिभयानक रस अभिव्यक्त होता है।

4. स्नेह– स्नेह भाव के दो प्रकार हैं– प्रथम पाल्यपालक भाव स्नेह तथा द्वितीय सेव्यसेवक भाव स्नेह। पालक ;मातापितादिद्ध का पाल्य ;पुत्रापुत्रयादिद्ध के प्रति जो स्नेह है वह पाल्यपालक भाव स्नेह है यथा बालि की पत्नी का भगवान् वामन के प्रति पुत्रावत् स्नेह। सेवकादि का अपने स्वामी के प्रति जो स्नेह है वह सेव्यसेवक भाव स्नेह है। यह तीन प्रकार का होता है– दास्य, सख्य तथा मिश्रित। इनके क्रमशः उदाहरण हनुमान् का श्रीराम के प्रति स्नेह दास्य है। सुदामा का श्रीकृष्ण के प्रति स्नेह सख्य है तथा अर्जुन और उ(व का श्रीकृष्ण के प्रति स्नेह ;दास्य और सख्य से युक्तद्ध मिश्रित सेव्यसेवक भाव स्नेह है। इस प्रकार उक्त पाल्यपालक एवं सेव्यसेवकभाव स्नेह से द्रवीभूत चित्त में प्रविष्ट भगवदाकारता क्रमशः वत्सल रति एवं प्रेयो रति नामक स्थायिभावों से वत्सल रस एवं प्रेयो रस की अभिव्यक्ति होती है।[6]

5. हर्ष– चित्त का समुल्लास हर्ष कहलाता है उसके चार प्रकार होते हैं– 1. शु(हर्ष, 2. हास हर्ष, 3. विस्मय हर्ष 4. उत्साह हर्ष। प्रथम शु(हर्ष से द्रवित चित्त में प्रविष्ट भगवद्विषयक रति शु(ा होती है इस रति के उत्पन्न होने के पश्चात् शास्त्रानिर्दिष्ट साध्नाभ्यास की आवश्यकता नहीं रह जाती है क्योंकि परम साध्य भगवान् के प्राप्त हो जाने पर न कोई अन्य साध्य अपेक्षित है और न ही किसी साध्ना की आवश्यकता रहती है।[7] इस शु(ा रति से विशु(भक्तिरस की अभिव्यक्ति होती है।[8] लज्जा, विकृतवाणी, वेष, हावभावादि से युक्त हर्ष से चितद्रुति होने पर हास स्थायिभाव होता है जिससे हास्य रस की अनुभूति होती है।[9] अलौकिक चमत्कारी वस्तु को देखने से तीसरा हर्ष उत्पन्न होता है उससे द्रवीभूत चित्त में जो विकास होता है वह विस्मय कहलाता है जिससे अद्भुत रस अभिव्यक्त होता है।[10] यु(ादि के परिणामस्वरूप वीरों के चित्त में उत्पन्न होने वाला हर्ष चित्त द्रुति होने पर चौथा उत्साह हर्ष होता है। यु(ात्साह नामक स्थायिभाव से यु(वीर नाम भक्तिरस अभिव्यक्त होता है।[11]

6. शोक– प्रिय के वियोग से चित्त में जो विकलता होती है उस व्याकुलता से द्रवीभूत में प्रविष्ट रति शोक कहलाती है। इसी शोक रति से करुण भक्ति रस की अभिव्यक्ति होती है।[12]

7. दया– इन्द्रिय सुलभ विषयों की तुच्छता का ज्ञान होने पर उन विषयों के प्रति महती घृणा ही दया कहलाती है। दया से होने वाली चितद्रुति जुगुप्सा कहलाती है।[13] यह जुगुप्सा तीन प्रकार की होती है– (1) उद्वेगिनी (2) क्षोभिणी, (3) शु(ा। उक्त तीनों प्रकार की जुगुप्सा भगवद्विषयता से भिन्न होती है क्योंकि भक्त का श्रीकृष्ण के प्रति कदापि घृणा जुगुप्सा वा सम्भव नहीं है। अतः इससे अभिव्यक्त होने वाला बीभत्स रस भक्ति रसता को प्राप्त नहीं होता है।

दया एवं हर्ष तापक दोनों मिलकर चित्त को तीन प्रकार से द्रवित करते हैं– दयोत्साह, दानोत्साह, ध्र्मोत्साह। ये तीनों ही क्रमशः दयावीररस, दानवीररस और ध्र्मवीररस में परिणत हो जाते हैं परन्तु भक्ति रसत्व को प्राप्त नहीं होते हैं।

8. शम– काम्य वस्तुओं के प्रति उदासीनता या रागशून्यता से वशीकार वैराग्य कहलाता है। इस वशीकार वैराग्य से द्रवितचित्त मे प्रविष्ट रति को शम कहते हैं।[14] श्रीकृष्ण के प्रति विरक्ति न होने से अभिव्यक्त होने वाला शान्तरस भक्तिरसता को प्राप्त नहीं होता है।

इस प्रकार मधुसूदन सरस्वती के अनुसार काम, क्रोध, भय, स्नेह, हर्ष, शोक, दया और शम इन आठ तापकों के द्वारा ही चित्त द्रुति होती है इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी भाव स्थायिभाव नहीं है।[15]

9. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कामः शरीरसंबन्धविशेषस्पृहयालुता।
   संनिधनासंनिधनभेदेन स भवेद् द्विध।। भ.रसा 2/3
2. तज्जन्यायां द्रुतौ चित्ते या स्याच्छ्रीकृष्णनिष्ठता।
   संभोगविप्रयोगाख्या रतिः सा सा क्रमाद् भवेत्।। वही 2/4
3. क्रोध ईर्ष्यानिमित्तं तु चित्ताभिज्वलनं भवेद्।
   तज्जन्यायां द्रुतौ सा तु द्वेषशब्देन गृह्यते।। वही, 2/5
4. भ.रसा., 2/6
5. द्वेषाहेतुः स्वमन्तूत्थं वैक्लव्यं चित्तगं तु यत्।
   तज्जन्यायां द्रुतौ या{{स्ते रतिः सा भयमुच्यते।। भ.रसा. 2/8
   स्नेहः पुत्राादिविषयः पाल्यपालकलक्षणः।
   सेव्यसेवकभावो{न्यः सो{प्युक्तस्त्रिाविधे बुधै।।
   भगवद्दास्यसख्याभ्यां मिश्रितं चापरं जगुः।
   या कृष्णाकारता चित्ते तज्जन्यद्रतिशालिनी।।
   पाल्यपालकभावेन सा वत्सलरतिर्भवेत्।
   सेव्यसेवकभावेन प्रेयोरतिरितीÕर्यते।। वही, 2/9–11
6. हर्षश्चित्तसमुल्लासः कथ्यते स चतुर्विधः।
   एकः परानन्दमयः श्रीशमाहात्म्यकारणम्।।
   तज्जन्यायां द्रुतौ शु(ा रतिर्गोविन्दगोचरा।
   एतदन्तं हि शास्त्रोषु साध्नाम्नानमिष्यते।। वही, 2/12–13
7. विशु(ा वत्सलः प्रेयानिति भक्तिरसास्त्रायः।
   रसान्तरामिश्रितास्ते भवन्ति परिपुष्कलाः। वही, 2/35
8. व्रीडाविकृतवाग्वेषचेष्टा{{दिजनितो{परः।
   तज्जन्यायां द्रुतौ चेतोविकासो हास उच्यते।। भ.रसा. 2/14
9. लोकोत्तरचमत्कारिवस्तुदर्शनजः परः।
   तज्जन्यायां द्रुतौ चेतोविकासो विस्मयो मतः।। वही, 2/15
10. यु(ाभिपातजनितो वीराणां जायते परः।
    ततश्चित्तस्य विस्तारो द्रुतस्योत्साह उच्यते।। वही, 2/16
11. इष्टविच्छेदजनितो यश्चित्ते क्लिष्टतोदयः।
    तज्जन्यायां द्रुतौ विष्टा रतता शोक उच्यते।। वही 2/17
12. दया घृणा स्याद्विषयतुच्छत्वज्ञानपूर्विका।
    तथा द्रुते तु मनसि जुगुप्सा जायते त्रिाध।। वही, 2/18
13. वशीकाराख्यवैराग्यं यत् कामास्पृहता{{त्मकम्।
    तेन द्रुतस्य चित्तस्य प्रकाशः शम उच्यते।। वही, 2/24
14. इतो{न्यथा तु चित्तस्य न द्रुतिर्विद्यते क्वचित्।
    तदभावात्तु भावो न निरुक्तान्यो{स्ति कश्चन।। भ.रसा. 2/25